ये अनजाने

शंकर

रूपान्तर

पृथ्वीनाथ शास्त्री, रघुवीर सहाय

राधाकृष्ण प्रकाशन

प्रकाशक
श्री ओमप्रकाश
राधाकृष्ण प्रकाशन
४ १४ रूपनगर
दिल्ली ७

मूल्य
सात रुपये

मुद्रक
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस
क्वीन्स रोड
दिल्ली।

पहला सम्पूर्ण अनुवाद

मसार परिक्रमा के पथ मे कितना विचित्र सचय दिन प्रतिदिन होता रहता है। जो एक दिन अपरिचित रहता है, अज्ञात रहता है, वही एक दिन परिचित और ज्ञात हो जाता है। वही अपरिचय का घूघट खोलकर मन के द्वारा फिर उपलब्ध होता है। इस सचय की पूजी कभी-न कभी भारी हो उठती है और तभी स्मृति गगन म रग फूट पडते हैं।

घटनाचक्र-वश ओल्ड पोस्ट आफिस स्ट्रीट क अदालती कार्यक्षेत्र म मुझे भी एक दिन असख्य अपरिचित चरित्रो के साक्षात सम्पर्क म आना पडा था। तब अजनबी को पहचानना और अजान को जानना मेरी जीविका का अनिवार्य अग था। अब इतने दिन बीत जाने पर अकस्मात एक दिन एक ऐसी टेर सुनी कि मेरा आकाश रगो से चित्र विचित्र हो उठा।

न जाने क्यो, अपने आप, अनजाने ही, मैं उन अजनबियो को मन ही मन प्यार भी करने लगा था। यह ठीक है कि कानून के साथ साहित्य का विशेष मधुर सम्बन्ध नही है—कम से कम यह तो कहा ही जा सकता है कि साहित्य के कमल-वन म कानूनी कलरव ठीक-ठीक अलि गुजन-सा नही लगता। किन्तु इस ग्रन्थ म मैंने कानून नही आने दिया है। ओल्ड पोस्ट आफिस स्ट्रीट म जिन आदमियो को एक दिन चाहा था, उन्ही को आज लिपिबद्ध करने की चेष्टा की है, और कुछ नही।

—शकर

दिवंगत
नोएल फ्रेडरिक बारवेल महोदय
की पवित्र स्मृति
को समर्पित !

२४०

कत अजाना रे जानाइले तुमि
कत घरे दिले ठाईं ।
दूर के करिले निकट बन्धु,
पर के करिले भाई ।

कितने अनजान
व्यक्तियों से तुमने मुझे परिचित कराया,
और कितने घरों में
मुझे स्थान दिलाया ।
जो दूर थे उन्हें बन्धुरूप में
निकट ला दिया
और कितने परायों को
भाई बना दिया ।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

"यही है हाईकोट ?'

सविस्मय, हाईकोट की सर्वोच्च मीनार की ओर ताकते हुए मैंने सोचा—क्या इसी का नाम हाईकोट है ! विभूतिदा की ओर देखा। उनके सहारे ही तो यहा आया हूँ। नौकरी मिलेगी और ऐसी वैसी नही, अंग्रेज बरिस्टर की नौकरी।

इसके पहले तो राह पर छोटी मोटी चीजें लेकर फेरी लगाता रहा हूँ। किन्तु व्यापारे वसते लक्ष्मी का मन्त्र जी जान से जपकर भी जब जिन्दगी बिताना मुश्किल दिखाई पड रहा था तभी लक्ष्मी की बहन सरस्वती ने अप्रत्याशित ही कृपा की। ग्रुस्ट रोड स्थित विवेकानन्द स्कूल की मास्टरी मैं शायद हरगिज न जुटा पाता, अगर उस स्कूल के श्रद्धेय हेडमास्टर साहब मेरे बजट सकट के जानकार न होते। मास्टरी माने अंग्रेजी और गणित की मास्टरी नही। मास्टर-समाज मे अंग्रेजी और गणित के मास्टर तो होते हैं कुलीन और बाकी सब होते हैं हरफनमौला। मैं इन्ही मे था। भूगोल, इतिहास, विज्ञान स्वास्थ्य बगला, सस्कृत कोई भी विषय पढ़ान से नही छूटा। वहा से सीधा चला आ रहा हूँ—रामकृष्णपुर घाट और होरमिल कम्पनी के अम्बा स्टीमर से नदी पार कर—हाईकोट !

होईकोट की मीनार की ओर फिर एक बार देखा। बच्चे की नाक जैसी तेज चोटी मानो बादलो के आवरण को भेदकर आकाश से मिल जाना चाहती हो। मेरी हालत देखकर विभूतिदा हँसकर बोल उठे, "गँवार को हाइकोट दिखाने मे यही होता है। अरे जब रोज यही आना पडेगा तब यह मीनार ही नही, इस भवन के अन्दर भी बहुत कुछ देख और जान सकोगे। अब चम्बर चलो।"

यह बहुत दिन पहले की बात है। आज समझ रहा हूँ कि विभूतिदा ठीक ही कहते थे। ओल्ड पोस्ट आफिस स्ट्रीट और उसी के पास दम

अभ्रकण लाल प्रासाद म जीवन नाटक के कितने ही दृश्य दिन रात चलते रह हैं। जिन्दगी के कई साल इस जगह खच करने स यादे क जमा खाते म रोकड बहुत बढ गई है। जितना देखा है उसम से कितना कम आज याद रह गया है। फिर भी न जाने कितने विचित्र चेहरा की तसवीरें याद के कोठे म आज भी सजी हैं।

विभूतिदा बोले ' साहब लाग अक्सर मिजाजी होते हैं, लकिन य साहब दूसरी तरह के हैं, बिलकुल दूसरी तरह के आदमी, कोई डर नही। पहल पहल थाडी-सी दिक्कत होगी, धीरे धीरे सब ठीक हा जाएगा।

"चेम्बर किस कहते हैं ?'

साहब लोग जहाँ बठते हैं वह जो सामन का पीला मकान है न !

इतनी दर बाद मरी निगाह उधर गई। यह मकान और नाम टम्पल चम्बर ! कितना पुराना था, नहीं कह सकता। ओल्ड पोस्ट आफिस स्ट्रीट के एक ओर है टेम्पल चेम्बर दूसरी ओर हाईकोट।

टम्पल चेम्बर के प्रवेश पथ म ही दीवार पर बहुत-से डाक के बक्स दखे। कोई चकाचक नया, तो काई ईस्ट इडिया कम्पनी के जमाने स ही साज सिंगार-हीन, फट हाल रास्ते के एक ओर बठा—डाकिया की प्रतीक्षा म मग्न।

खूब बडी इमारत। नीचे स ठीक ऊपर के छत तक। एक एक कोठरी म एक एक एटर्नी का अड्डा। बहुत सी कोठरियो म तो दिन दोपहरी म भी सूरज की रोशनी नदारद। इसीलिए तो कलकत्ता इलक्ट्रिक सप्लाई का व्यवसाय बढा है। दिन भर बत्ती जलाए तो भी यहाँ के किरायेदारो को गम नहीं तक दिया जलाये रखन म भी काई कमी नही पडती।

लिफ्ट म अजीब-सी सौंधी गध। बाबा आदम क जमान की लिफ्ट। तीन स ज्यादा यदि ऊपर जाने की जिद करें तो सचमुच रात क-सात जन्नत का मजा लूटने लगें। लिफ्ट क अनेक आरोही बयू लगाये है। काला कोट पहने एटर्नी और काला गाउन हाथ म लिये बरिस्टर। अधमैला कुर्ता पहने एटर्नी का बाबू (मुशीजी) और सफद धोती और माथे पर किश्तीनुमा मखमली की टोपी पहने मोटा, थुल थुल मारवाडी—कोई पसेवाला मुवक्किल। मेरे ठीक सामने हैं गरद की चादर ओढे एक बगाली विधवा, बच्चे खाने जसा

रग, हाथ म हरिनामी झोली । शायद किसी जमींदार की गहिणी कानूनी हिफाजत माँगने के लिए पूजा छोडकर एर्टनी आफिस की लिफ्ट के सामने लाइन लगाए है ।

शतरजी प्याद की चाल से एक एक कदम मापत हुए हम भी अन्त म लिफ्ट के अन्दर घुस ही पडे । लिफ्टमैन ने एक बार तिरछी नजर से ताका कुछ कहा नहीं । उम्र कुछ ज्यादा नही लकिन सिर के बाल सब सफेद । विभूतिदा ने भद्र से परिचय करा दिया, 'कहो भाई वृन्दावन, सब खबर ठीक है न ? यह साहब के नये बाबू हैं ।' लिफ्ट हू-हूँ करती-सी ऊपर उठ रही है एक एक मजिल क्षणिक झाँकी-सी दिखाकर नीचे उतरती जा रही है। वृन्दावन ने इस बार मुझे अच्छी तरह स देखा किन्तु कुछ कहने स पहल ही लिफ्ट की मूठ घुमानी पडी । उतरने का समय आ गया ।

जेब से चाबी निकालकर विभूतिदा ने दरवाजा खोला । बत्ती जला दी । एक बडा कमरा, बीच म पार्टीशन । सामने के छोटे-से हिस्स म एक मज, आलमारी और कागज-पत्तर। "हम यहा बठते हैं।" स्विंगडोर ठेलकर विभूतिदा मुझे दूसरी ओर ले जाकर बोले साहब यहा बठते हैं। बडी मज, चारा ओर बहुत-सी कुर्सिया । दूसर कोने म एक और छोटी सी मज । तीनो ओर की दीवार रका से ढँकी और उनमे अनगिनती मोटी मोटी कानूनी किताबें ।

"इतनी किताबें !

अरे ये तो कुछ नही —विभूतिदा न समझाया, यहाँ का कारबार ही किताबी है । कारखाने म जसे आरी-हथौडी होत हैं वस ही य भी वकालत के औजार हैं । और भी न जाने कितनी किताबा की जरूरत पडती है । एक बार जब लाइब्रेरी ल जाऊँगा, तब सब देख लाग ।

साहब अभी आए नहीं थे । एक कुर्सी पर विभूतिदा बठ गए । मुझम भी बठने को कहकर चारा ओर एक दद भरी नजर फकी, फिर अपनी कहानी शुरू की ।

सोलह साल पहल विभूतिदा जब टेम्पल चेम्बर म आय थे तब उनकी उम्र बीस साल थी । पाच रुपए महीन पर टेम्पल चेम्बर म ही एक एटर्नी के आफिस म टाइपिस्ट थे । लिफ्ट म एक तगडे से अंग्रेज बरिस्टर के साथ अक्सर

मठभेड हो जाती थी लेकिन विभूतिदा भयभीत गुमसुम से एक कोने में रहते थे। आफिस से बाहर जाते समय भी कई दिन इन्हीं साहब से आँखें मिलीं फिर एक दिन यह सवाल भी पूछा गया क्या काम करते हो ?'

एक शनिवार को विभूतिदा दोपहर बाद डेढ़ बजे सामान बन्द कर रहे थे, तभी अकस्मात बेअरा ने आकर कहा बगल के कमरे के बैरिस्टर साहब आपको बुलाते हैं।"

मेरा एक जरूरी टाइप का काम कर दोगे ? यही टाइपराइटर रखा है।' साहब ने पूछा।

विभूतिदा राजी हो गए मन लगाकर टाइप कर रहे थे कि हठात सुनाई पड़ा, सन्तरा खाओगे भाई सेन ? चौंककर देखा तो सामने साहब खड़े थे—हाथ में सन्तरा। विभूतिदा को ताज्जुब हुआ। ये कैसे साहब हैं ? मालिक लोग क्या कभी टाइपिस्ट के साथ सन्तरा बाँटकर खाते हैं '

काम-काज खत्म कर जाते समय साहब ने उनके हाथ में एक पाँच रुपये का नोट थमा दिया तुम्हारा पारिश्रमिक।

'जी पर मेरे पास तो खुदरा नहीं है।

नहीं नहीं खुदरा की जरूरत नहीं पूरे पाँच रुपये ही तुम्हारे हैं।

विभूतिदा को यकीन न आया। डेढ़ घंटे में पाँच रुपये—यह तो उनकी महीने भर की तनख्वाह है !

छुट्टी के बाद कभी कभी इसी तरह काम करने पर पाँच रुपये का नोट पाने लगे विभूतिदा। आखिरकार एक दिन साहब पूछ बैठे मेरे यहाँ काम करोगे ?

विभूतिदा पूछते ही राजी हो गए। इतना अच्छा मौका कौन छोड़ देता ?

किन्तु दो चार दिन काम करके ही विभूतिदा हाँफ उठे। बहुत ज्यादा मेहनत। दिन नहीं, रात नहीं सिर्फ काम काम। छुट्टी के दिन भी निस्तार नहीं, रात को साढ़े आठ बजे तक टाइप करो। ना बाबा यह नहीं चलेगा। साहब से कुछ कहे बिना ही विभूतिदा चम्पत हो गए। पहला दफ्तर आफिस ही अच्छा था। लेकिन दो दिन के बाद ही टेम्पल चेम्बर के सामने विभूतिदा साहब के सामने पड़ गए। साहब ने हाथ पकड़ लिया,

'नौकरी छोड़कर जाएगा कहाँ, ऊधमी लड़के ?" नर्मदा से स्कूल से भागे लड़के की तरह, साहब के पीछे पीछे विभूतिदा फिर चेम्बर लौट आए।

"तब का आया, अब जा रहा हूँ। एक के बाद एक ये सोलह बरस लगातार कट गए। एक लम्बी साँस लेकर विभूतिदा ने कहा।

इन सोलह साल में विभूतिदा ने साहब को पहचान लिया था।

साहब ने उन्हें बुलाकर कहा, विभूति, तुम्हारे घर जाऊँगा।

"क्या कहते हैं आप ? हम लोग तो बड़ी गन्दी जगह रहते हैं।'

उस तब भी जाऊँगा।

साहब घर आए हैं। पहने हैं धोती-चादर—बंगाली के घर बंगाली वेशभूषा में जाना चाहा था। धोती पहनना आसान नहीं। कमर में अटी लगी ही रहना नहीं चाहती। साहब ने ऊपर से पेटी बाँध रखी है। शांतिपुरी धोती गरद का कुर्ता और सिल्क की चादर।

'अपनी माँ के दर्शन कराओ न।'

घूँघट लगाए विभूतिदा की माँ सामने खड़ी है। वह कह रही हैं, "लड़के को आप ही के हाथों सौंप दिया है।

साहब फिर आए माँ की बीमारी की खबर सुनी थी। किन्तु उनकी गाड़ी काली बाड़ुज्ये की सँकरी गली में से जब किसी तरह विभूतिदा के दरवाजे पर आकर रुकी तब तक सब समाप्त। अर्थी और मातमपुर्सी करने वाले लोग उससे आधा घंटे पहले ही गली का मोड़ पार कर चुके थे। आफिस में विभूतिदा रो पड़े, कंधे पर हाथ रखकर साहब ने दूसरी ओर मुँह फिरा लिया। तुम्हारी मदर को वचन दिया था, आज से तुम लोगों की देख भाल का दायित्व मेरा है।"

और भी दिन बीते। विभूतिदा ने छोटे भाई बहन को स्कूल कालिज में भर्ती करा दिया या नहीं, साहब ने पूछताछ की। बहन की शादी में साहब भी शामिल हुए। पूछा "सब ठीक है न ?'

एक दिन फिर काली बाड़ुज्ये लेन में साहब गाड़ी से उतरे। इस बार भी धोती-कुर्ता पहने थे। हाथों में फूलों का गजरा था और चेहरे पर हँसी। विभूतिदा की शादी जो थी।

इस तरह न जाने कितने मौके पड़े कि विभूतिदा और साहब दोनों ही अपने बीच नौकर मालिक का सम्बन्ध भूल गए। मानो एक ही परिवार में रहते हों। एक ही तागे से दोनों की जिन्दगी बंधी हो।

लेकिन अब सोलह साल बाद विभूतिदा के मन में एक और डर बैठ गया था। बाल बच्चेदार आदमी हैं। घर गिरस्ती का दायित्व है। साहब के तो बाल सफेद हो गए लेकिन विभूतिदा के सामने अभी बहुत-सी जिन्दगी पड़ी है। सब सुनकर साहब ने भी हामी भरी— 'ठीक कहते हो। पेंशन सर्विस में यहां तो दोष है। अच्छा ठीक है।' कुछ महीने बाद ही कनाल्व स्ट्रीट में साहब ने विभूतिदा के लिए एक और नौकरी जुटा दी।

'इन्हीं साहब को मैं मतलबी दोस्त की तरह छोड़कर जा रहा हूं। किन्तु तुम इनका देखना।' विभूतिदा की आंखें भर आई।

'साहब की देखभाल करोगे तो?' विभूतिदा ने फिर पूछा।

'लेकिन पहले इण्टरव्यू तो हो ले। साहब मुझे पसन्द करेंगे भी या नहीं यही ठीक नहीं अभी।'

इसी समय कई जूतों की आवाज सुनाई दी।

'साहब आ रहे हैं।' विभूतिदा ने कहा।

'मैं तो अंग्रेजी बोलने में हकलाता हूं।'

'कोई डर नहीं। सिर्फ गुड मार्निंग कहना। और फिर मैं तो मौजूद ही हूं।' किन्तु उत्तेजनावश ठीक समय पर मेरे मुंह से गुड मार्निंग भी नहीं निकला। उल्टे साहब ही मुझसे 'गुड मार्निंग' कहकर कमरे में अन्दर आ गए। पीछे पीछे मानिकचन्द और दीवानसिंह दोनों बेअरे भी।

एक अंग्रेज के साथ जिन्दगी में यह मेरी पहली मुलाकात थी। छः फुट लम्बी गुलाबी देह, इस उम्र में भी कमर और छाती सीधी, करीब-करीब सारा सिर गंजा, सारे चेहरे पर बिखरी सी हंसी।

विभूतिदा मुझे भीतर साहब की मेज के नजदीक ले जाकर बोले 'इसी लड़के का बाबत कहा था मैंने।'

'आल राइट, कामकाज सब समझा दिया है न?"

'नहीं, बिना आपका पहले दिखाए ही'

दोनों आंखें चमकाकर सिर हिलाते हुए वे बोले, 'यह तो ठीक कहते

हो। अभी मुझे कुछ मुश्किल सवाल, वे भी खास विलायती लहजे म, इससे पूछने हैं।"

एँ!

विभूतिदा ने मेरी हालत ताड ली, बोले, "नही, नही साहब कुछ नही पूछेंगे। ऐसे ही मजाक कर रहे हैं।

साहब न नाम पूछा। पूरा नाम सुनकर बोले 'उँह, इतना बडा नाम मैं नही बोल सकूगा। एक छोटा-सा पोर्टेबल नाम चाहिए।'

आँखें बन्द कर साहब खुद सोचने लगे।

"अच्छा नाम रखना बहुत कठिन है। किन्तु हूँ मिल गया—शकर। इस नाम म कोई उज्र है?"

ओल्ड पोस्ट ऑफिस स्ट्रीट के जीवन मे उसी दिन मेरा असली नाम खो गया। अब मुझे उस नाम से कोई नही बुलाता। पुरानी बनारसी साडी की तरह वह विस्मृति की सन्दूकची म कहीं दबा पडा है, मैं खुद भी उसकी खोज खबर लेने की इच्छा नही करता।

जेब स चाबी का रिंग निकालकर विभूतिदा ने मेरे हाथ पर रख दिया। "यह घर गिरस्ती अब आज मे तुम्हारी। सब देना पावना समझ लो मुझसे।' विभूतिदा ने छोटे मोटे दो-तीन खातो का हिसाब किताब समझा दिया। चेम्बर म बहुत कुछ करना पडता है। किन्तु वह सब क्रमश स्वय समझ जाओगे। किसी ट्रेनिंग की जरूरत नही। जो सबसे ज्यादा काम आएगी वह विद्या एम० एन० दत्त के शार्टहैण्ड स्कूल म सीख ही चुके हो। कोर्ट म काम कम होने पर साहब बहुत सी चिट्ठी पत्री लिखाएग, उन्ह अच्छी तरह टाइप करना।'

शार्टहैण्ड से जो पहली चिट्ठी मैंने टाइप की थी वह आज भी याद है। साहब खूब धीरे धीरे ही बोले थे। आठ-दस लाइन की चिट्ठी टाइप कर मेज पर रख जाने के कुछ क्षण बाद ही मोहनचाँद आकर बोला, "साहब आपको बुला रहे हैं। भीतर आकर तिरछी नजर से चिट्ठी की ओर ताका तो मेरे कान खडे हो गए। दस लाइनो मे कम से-कम पन्द्रह गलतिया, किन्तु साहब ने कुछ भी नहीं कहा मुझसे।

चिट्ठी फिर टाइप कर उनके आगे सरका दी। इस बार हँसकर बोले,

"वाह, बहुत ठीक!'

मैं चुप रह गया।

यह भी अद्भुत संयोग था। मेरे साहब कलकत्ता हाईकोर्ट के शायद अन्तिम अंग्रेज बैरिस्टर थे, यह विभूतिदा ने ही कहा था। फिर यहाँ क्या, विभूतिदा ने और भी बहुत-सी बातें बताई थीं।

यह भी किस ज़माने की बात है! सुप्रीम कोर्ट की नींव पड़ी लार्ड नार्थ के रेगुलेटिंग एक्ट में। चाँदपाल घाट के पास ही कुछ जज-साहबान पहले पहल कलकत्ता की भूमि पर पधारे। जो खास विलायत से बंगाल मुल्क में आये, उनके पधारते ही गर इशारा हुए। रास्ते में पंक्तिबद्ध खड़े देशी तमाशबीनों की भीड़ देख इम्पे चौंक उठे। बहुत-से लोग नंगे बदन, नंगे पैर! दूसरे जजों की ओर देखकर इम्पे ने कहा, 'ब्रदर्स, देखते हैं आप लोग, इस देश के लोगों के तन पर न तो कपड़े हैं और न पैरों में जूते और जुराब। लेकिन हम एक छमाही में ही इनको जूता-जुराब पहना छोड़ेंगे।'

इसके बाद कितनी ही छमाहियाँ निकल गईं। इस देश के लोगों को जूता जुराब पहनाने वाली बात इम्पे साहब बिलकुल भूल गए। जुराब तो दूर की बात है, सबको पेट भर खाने का भी इन्तजाम न हुआ। इम्पे उस समय पुल तैयार करने का ठेका हासिल करने के लिए हेस्टिंग्स के यहाँ दौड़-भाग में लगे थे। मसखरों ने उनका नाम पुल बाँधने वाला इम्पे रख लिया। महाराज नन्दकुमार को फाँसी पर लटकाकर पुल बाँधने वाले इम्पे साहब ने इतिहास में अपनी अक्षय कीर्ति भी स्थापित कर दी।

इम्पे के पीछे-पीछे ही विलायती साहबों का और एक दल हाज़िर हुआ। सुप्रीम कोर्ट के आस-पास उनके तम्बू बिछ गए। ये एटर्नी। ये

बैरिस्टर। विलायत की क़ानूनी व्यवस्था को यहां चालू करने जैसा कोई उनका महान उद्देश्य था या नहीं, मैं नहीं जानता, शायद अर्थलाभ में ही वे बंगाल पधारे थे। किन्तु धीरे धीरे उनके द्वारा एक महीयसी परम्परा स्थापित हो गई। कलकत्ता में 'बार' का गौरवशाली इतिहास गढ़ा जाने लगा।

उस ज़माने में क़ानूनी काम इतना सीधा नहीं था। लोगों का तब तक अदालत की सर्वोपरि मान्यता मंजूर नहीं थी। 'जिसका ज़ोर उसका मुल्क', इसी का बोलबाला था। कोर्ट में मुकदमा चलाने में फ़ायदा नहीं, चूंकि मुकदमा जीतने पर भी दूसरा पक्ष अदालत की राय नहीं मानता था। लोग कहते लाठी हाथ में होने पर अदालत क्या?' क़ानूनदां जानें इसकी युक्ति व्यवस्था तो करनी ही पड़ेगी। लोग यदि अदालत की हुकम उदूली कर दें तो कोट खोलने से लाभ ही क्या हुआ?

उस ज़माने के बैरिस्टर साहब भी क़ानून को अमल करने में 'नादिर' लोगों से पीछे नहीं रहते थे। साहब लोग अपनी ज़रूरत के मुताबिक़ दंगी लोगों में सिर्फ़ पैसा चूसी ही नहीं, रुपया-पैसा भी ठग लेते थे। अपने इलाके में वे खुद ही एक एक हिज हाईनेस थे। अपने देश में सुबोध सुशील व्यक्तियों का यह नवाबी मिज़ाज देखकर जज लोग भी अचम्भे में पड़ गए। रामचन्द्र बाडुज्ये नामक एक सज्जन ने अर्ज़ी दी, 'धर्मावतार विहार के कलेक्टर मैकेंज़ी ने सत्ताईस हज़ार रुपये कर्ज़ लिए थे बहुत पहले, लेकिन अब वह बाकी कर्ज़ा नहीं चुकाना चाहता।'

मुकदमा चला, विचार हुआ, सुप्रीम कोर्ट ने डिक्री दी कि मैकेंज़ी को बाकी रुपये देने पड़ेंगे।

मैकेंज़ी साहब ऐसे-वैसे तो नहीं थे न! वह विहार के मजिस्ट्रेट थे। खबर सुनते ही बोले 'इतनी बड़ी हिमाकत? मेरे नाम पर डिक्री? एक भी पैसा नहीं मिलेगा।'

सुप्रीम कोर्ट के शेरिफ़ मैकेंज़ी को पकड़कर लाने विहार पहुंचे। लेकिन रास्ते में ही खासी मोटी लड़ाई का बन्दोबस्त हो गया। मैकेंज़ी साहब के बरकन्दाज़ तीर-कमान, ढाल-तलवार और बन्दूक लिए तैयार थे। शेरिफ़ के दलबल पर जब ये 'लाग मारो मारो' कहकर टूट पड़े तब तो

जो जिधर जा सका, भागा।

सुप्रीम कोर्ट भी छोडनेवाला नही था। उसके सम्मान पर आघात था यह। अत इस बार शेरिफ साहब पूरी एक फौज के साथ फिर बिहार भेजे गए। जनरल उड और उनकी आर्मी जरूरत पडने पर मर्केजी के साथ लड़ने को तैयार थी। आखिरकार मर्केजी ने रामचन्द्र घोड़ूस का वज चुका दिया।

मार भेजकर डिग्री इजराय करान की प्रथा ज्यादा दिन नही चलानी पडी। लोग क्रमश समझ गए कि अदालत की बात मानने म नफा ही है नुकसान नही। रुपय-पैसे जर-जमीन के मामलो म आपस म लाठी चलाना या हाथापाई करना छोडकर वे कोर्ट आने लगे। देश म खून और मार पीट की सख्या काफी कम हो गई, लठैतो का व्यवसाय मन्द पडा तो दूसरे उन बुद्धिजीवी लठैतो का दल आ गया जो कानूनी लडाई लडकर ही अपना जिन्दगी बिताते हैं। विलायत से असख्य जज बरिस्टर और एटर्नी आकर कलकत्ता की कानूनी दुनिया जमान म सहयोग देने लगे।

इसके बाद इतिहास के रथ का पहिया कितनी ही बार घूमा होगा। कहाँ गए वारेन हेस्टिंग्स और इलाइजा इम्पे? कहाँ गये कानवालिस और वेलेजली? अत मे जिसने राजपाट जमाया था वह ईस्ट इडिया कम्पनी भी नही रही। समय के आघात से एक दिन सुप्रीम कोर्ट का पुराना मकान भी कलकत्ता की छाती से मिट गया। नया हाईकोर्ट तयार हुआ आल्ड पोस्ट आफिस स्ट्रीट के एक ओर। लेकिन पुरानी परम्परा के मात म कही बाधा नही पडी।

गण्यमान्य बरिस्टर हाईकोर्ट म आए। विख्यात एटर्नियो का भुण्ड आया। आल्ड पोस्ट आफिस स्ट्रीट म सिर ऊचा किये एक विशाल भवन खडा हो गया। टेम्पल चेम्बर, लिंडसी चेम्बर। अनेक मुकदमे, अनेक मुवक्किल। एक सौ साल से यह कानूनी मुहाल आज भी आबाद है।

यह मुहाल भी अजीब जगह है विभूतिदा ने कहा, मुवक्किल, जज साहब, वकील बरिस्टर और एटर्नी के अलावा कितनी ही तरह के लोग आते-जाते हैं यहाँ।"

'शायद थोडा बहुत जानते भी हो, लेकिन फिर भी बता दू। खास तौर

से एटर्नी-बरिस्टरा का सम्बन्ध बहुत से बाहरी लोग नही जानते। 'डयुअल सिस्टम' या ऐसा ही कुछ एक नाम भी है। मुवक्किल के साथ पहली मुलाकात एटर्नी करते हैं। हाईकोर्ट मे मुकदमा गया तो एटर्नी के पास जाना ही पड़ेगा। एटर्नी केस को ठीकठाक कर कोर्ट म फाइल कर देते है और बरिस्टर को ब्रीफ भेजते हैं—जज के सामने मुकदमा लडने के लिए। बरिस्टर मुवक्किल के साथ सीधा सम्बन्ध नही रख सकते। सारा काम एटर्नी द्वारा ही कराना पडता है।'

विभूतिदा ने और भी आगे कहा "इस जगह कानून के ही नाम पर दुनिया भर के गैर कानूनी काम होते है। वकील झूठ बोलते हैं। एटर्नी मौका मिलते ही मुवक्किल को चूस लेते है। भाई भाई म मुकदमा चला तो वे दोना तो भिखारी हो जाते हैं और एटर्नी लोग कलकत्ता मे मकान बना लेते हैं। इसम झूठ नही, यह भी नही कहा जा सकता कि यहा सभी चार डाकू है। यहा ऐसे भी कितने ही लोग हैं जो कभी झूठ नही बोल। सत्य ही उनके जीवन की एकमात्र पूजी है।

विभूतिदा फिर साहब की बात पर लौट आए। बोले, "वुडरफ, सर ग्रिफिथ इवाम और विलियम जक्सन जसे जज बरिस्टर कानून की जो कीर्ति छोड गए हैं हमारे साहब उसी कीर्ति के अतिम मशालधारी हैं। कलकत्ता हाईकोर्ट के अतिम अंग्रेज बरिस्टर! अठारहवी सदी म जिसका प्रारम्भ है और बीसवी सदी की दुपहरी म जिसका अत"

टेम्पल चेम्बर म ठीक दस बजे पहुँच जाता हूँ। साढे दस बजे कोर्ट जाने से पहले साहब काम-काज देख जाते हैं। लच के समय लौटकर वे उसे देखेंगे। फिर कोर्ट जाएँगे तो बजे और लौटेंगे चार बजे। मोहनलाल फ्लास्क से, ठण्डा कर एक गिलास पानी उनकी ओर बढ़ा देगा। पानी पीकर मुझे

सुनाएगा।

"कैसा लग रहा है भाई सन कोई तकलीफ हो तो मुझे बताना। मैं कैस हाल पर ही कोट जाता हू नहीं तो यही काम करता रहता हू।

मैं चुपचाप खडा रहता हू।

कुछ बोलत क्या नही नही बोलोग तो छोडू गा नही। पत्र पढ़त दो चार गलतियाँ सब करते है। अग्रेजी भाषा सरल नही है। साहब हस हँसकर कहत है।

अन्त म हिम्मत कर मैंन बातचीत शुरू कर दी, प्राय चीनी अग्रेजी अग्रेजी म।

साहब उसी से खुश। कहते 'मैया मरे भी सिर म बाल नहा रह गए है किन्तु मैं बूढा का बर्दाश्त नहा कर पाता। बचपन के साथ ही मैं मन की बातें बोलता हू। ठीक है न, मिस्टर मोहनचाँद ?

मोहनचाँद घबरा होने पर भी मुझको एक सो सनी अच्छी अग्रेजी समझता है। वह वस म कागज पत्र सजाते हुए साहब की बातो पर मन म हसी दबा जाता है बोलता कुछ नही।

इतन बड बैरिस्टर लकिन शिशु सुलभ मन। समय मिलता तो बहुत सी बातें करत। किन्तु काम के समय बहुत ज्यादा गभीर रहत। आखो पर चश्मा लगाकर जब पुस्तकें पन्ने तब कौन यह कह सकता था कि य ही मरे साथ सिर क गजेपन पर गप शप भी करत हू ? काम क वक्त तो कोई आवाज भी नही सहते। किताब या कागज सामने रखवाने म थोडी सी दर हो जाए तो नाराज हो जात हैं। काम खत्म हुआ नही कि फिर वही पुराना जस। पास बुलाकर बातें करत और पूछते, इस जानते हो, उस जानत हो? यदि कहता नही तो उसी समय सब सरलता से समझा देते।

साहब एस्प्लेनड पर एक नामी गिरामी होटल म रहते थ। छुट्टी होन पर उनकी गाडी स रोज वहा जाता। चाय पीने के बाद कुछ आराम करने दो एक चिट्ठी टाइप कर होटल स निकल आता।

होटल नही मानो राजभवन था। करीब तीन सौ कमर होंगे। और

अगर तमगे लग नौकर चाकरा का गिना जाए तो वहाँ मदुम शुमारी का दफ्तर ही खोलना पड़ेगा। अंग्रेज, फिरंगी, अमरीकी, चीनी, जापानी आदि सब जातियों के इस मिलन-तीर्थ म बिहारी, बगाली और उड़िया भी मौजूद थे। किन्तु य लोग तो यहाँ पर केवल अल्पसख्यक थे।

मेरी धारणा तो यही थी कि होटल माने जहा खाना मिले और जरूरत हो तो रहने की भी सुविधा हो। लकिन रहने-खाने की सुविधा की तो कोई परवाह ही न थी। काट-छट की जरूरत हो तो टेलरिंग डिपाटमट म एक स्लिप भेज दीजिए। सिनेमा ? दुमजिल के हॉल म चल जाइए। सिनमा देखकर नहाने से पहले ही बाल या दाढी बनवा सकते हैं। देशी नाई नहीं, खास चीन म समागत हज्जाम !

यहा लच के वक्त मन्द स्वर म बाज बजते हैं शाम को चाय के वक्त भी, लकिन भिन्न स्वर म। रात क डिनर क समय सिर्फ निरामिष बाजे ही नहीं बजते कान्टिनन्ट म मशहूर सिनेमा और टी० वी० की मामल अप्सराएँ तब यहाँ रगमच पर उतर आती हैं ! उनकी सगीतमयी भकार और नाच की रुनझुन से आगन्तुक पहले तो मुग्ध और बाद म मन्त्रमुग्ध होते देखे जाते हैं। मेरी दौड़ तो अपनी गली के मोड पर खुले विनादिनी काफे तक ही है वहाँ की जानकारी लेकर यहा आने पर ऐसा जान पडा मानो अबहसन के दरबार म हाजिर हुआ हू !

दरवाजा पार करत ही होटल म अन्दर घुसने पर पहली अनुभूति होती है—एयर-कडीशनिंग मशीन की ठडी हवा का एक झोंका ! इसके बाद आँखें चकाचौंध करने वाला लाउज। कालीन से समूचे ढके फश पर कितने ही सोफे। पास म छोटी-छोटी तिपाइया पर विलायती, सचित्र पत्र पत्रिकाएँ ! शाम क बाद तो दीवारों के बीच म छिपे नीले बल्ब या ट्यूब रौशन होकर वहा एक धुधली सी सपनों की दुनिया ही रच देते हैं।

मेरी निगाह आजकल रोज ही लाउज के कोने की ओर बैठी एक महिला पर पड़ती है। महिला का वेशभूषा विचित्र सी है ! साज सिंगार म अजब व निपुणता है। अगर मुँह दूसरी ओर फिरा हो तो देह के दूसरे अगो को देखकर कौन कहेगा कि महिला की उम्र इक्कीस बाईस से ज्यादा है। किन्तु लन्दन और पेरिस के शृगार प्रसाधन निर्माताओं को एक जगह तो हारना

ही पता है। तरह-तरह के ब्यूटी प्रौडक्ट भली भांति लगाये जाने पर भी चेहरे पर उजड़ी जवानी के निशान ढँके नहीं गये हैं। यह समझने में तो दिक्कत नहीं होती कि वसन्त नहीं है किन्तु वसन्त की विदाई दस साल पहले हुई या बीस साल पहले यह मेरी अनाड़ी आँखें नहीं आँक पातीं।

पीछे दीवार पर अजन्ता शैली में शकुन्तला अंकित है। चित्र की पृष्ठ-भूमि में ढलता हुआ सूरज और मृगछौनों के साथ खेलने में भूली भटकी-सी तपोवन-वासिनी शकुन्तला! आस-पास पादप के टहनों में रंग भांति भांति के लता-पत्र। शकुन्तला के इस चित्र के साथ सहज उदास किये बैठी महिला का रूप घुल मिल जाता है और मानो एक नई छवि सामने खिंच जाती है।

हर शाम को दुमंजिले पर जाते समय उसको देखता था। काम खत्म कर लौटते वक्त भी लाउंज खाली नहीं रहता। अकेली बैठी रहती वही महिला, एक समाँ-सा बाँधे हुए।

एक दिन एक साहब को यह भी कहते सुना — लाउंज में सजावट के लिए अनेक मौसमी फूलों की तरह होटल कम्पनी ने इसे भी जुटा लिया है भाई सिर्फ गन्धहीन फूलों और तस्वीरों से ही लोगों का मन नहीं भरता!

महिला की साड़ी का रंग भी रोज बदलता था—कभी लाल कभी हरा तो कभी गुलाबी। एक पैर के ऊपर दूसरा पैर रखकर सोफा पर आराम से बैठी हुई श्रीमतीजी एक के बाद धुआँ भी शून्य में फेंकती रहती। बड़ी अनिच्छा के साथ यह धुआँ अलसायी चाल से दूर खड़े चित्रित मृगछौनों की ओर बढ़ जाता। औरतों के मुँह में सिगरेट—चाहे वे किसी भी देश की हों—मेरी आँखों को हमेशा खटकती है। लेकिन उसमें भी ज्यादा भली लगती थी सुनहरी धागियन जूतों हिलाने की उसकी भंगिमा। होटल वासिनी शकुन्तला का ध्यान भंग बस यहीं पर होता था।

कुछ दिन बाद लाउंज में एक युवक भी दीख पड़ा। उसकी उम्र चौबीस पचीस बरस के लगभग थी। उसकी खुली छत वाली लम्बी स्पोर्ट्स कार गेट पर खड़ी रहती। दीवार पर अंकित शकुन्तला की ओर पीठ करके वे दोनों मधुर गुंजन करते रहते। यह निराली बातचीत मानो किसी तरह खत्म ही नहीं हो पाती। सुबह बीतती, साँझ आती रातें हो जातीं किन्तु

यह मधुरालाप चलता ही रहता। पास म दो पीन के गिलास रखे रहते। उनम कोल्ड ड्रिक रहता या अगूरी, नही कह सकता। ज्यादा अन्दाज अगूरी का ही है। वजह यह है कि मैं यही समझता था कि सतरे या नीबू का शबत ही आदमी को ऐसा ढुलमुल बना सकता है।

होटल के बाहर घूमते समय भी कभी-कभी वही ब्यूक गाडी दिखाई पडती थी। ड्राइवर की जगह होता वह युवक और पास म बैठी होती यही महिला। आँखो पर नीला चश्मा लगाए।

ये दोनो ही होटल के नौकर चाकरो की तरह तरह की रस भरी बातो के नायक-नायिका बन गए।

रिसेप्शनिस्ट शालन बोस के साथ मेरी थोडी-सी जान पहचान थी। उसने एक दिन पूछा, 'पेड की ऊँची डाल पर कबूतर कबूतरी वाला सीन देखा है ?' पहले तो मेरी समझ म ही नही आया। समझा तो पूछा, 'ऊँची डाल कहा मिली ?"

"उतना ही तो बाकी है, नही तो पेड पर चढकर नसनी हटा देने मे भी कोई तरददुद नही होता।' बोस ने हँसकर जवाब दिया।

लाउज का प्रणय-दृश्य साहब की नजर से भी नही बचा। हाईकोर्ट से लौटकर एक दिन हम लोग लिफ्ट से ऊपर जा रहे थे। वे दोनो लाउज की रौनक कर रहे थे। मुह टेढा कर साहब ने पूछा, 'लाउज म बाघ भालू हाथी घोडा मार्का छोकरे को देखा है ?" (ब्यूक कार का मालिक युवक हमेशा अजीबो-गरीब जानवरो के छापो से छपी बुश्शर्ट पहने रहता था।) साहब ने थोडा और भी मुह टेढा कर कहा, 'छोकरा महिला को नानी बोलकर न भी पुकारे तो मा जैसे नाम से तो बुला ही सकता है।

सचमुच इन दोनो की बमल उम्र आखो म खटकती थी। उनका अगोपन प्रेमालाप भी शालीनता की हद पार कर चुका था। सोफा पर दोनो क बीच फासला कम होते होते लोप हो गया। फुसफुसाकर बातें होती। महिला गाना। बच्ची मौनी सी अपना सिर बुश्शर्ट पहने छोकरे की ओर गिरा देती। कभी-कभी एकदम हडबडाकर अपनी अस्त व्यस्त वेशभूषा ठीक कर लेती। उसके बाद हाथ म हाथ डाल दोनो बार की ओर जाते दीख पडते। अपना यह अनुचित कौतूहल दबाने की भरसक कोशिश करने पर भी मैं

गफ्त नहीं हुआ। सयम की लगाम पूरे जोर से खींचकर रखने पर भी हर बार दुमंजिल पर जाते समय लाउंज की ओर एक बार नज़र फेंकने का लालच मैं कभी नहीं रोक पाता था।

'मेम साहब आपको बुला रही हैं।'

लाउंज पार कर लिफ्ट में चढ़ने वाला ही था कि बाधा पड़ी। सामने बेयरा खड़ा था। अचम्भे के साथ बोला तुमने शायद ग़लत समझा होगा। वह मुझे कभी नहीं बुला सकती।

बेयरा सिर नीचा किए बोला 'जी आप ही को बुला रही हैं।'

बाध्य होकर लाउंज की ओर लौटना पड़ा। वह शकुन्तला की तसवीर के सामने ही बैठी थी। सामने आकर खड़ा हो गया। इतने नज़दीक से पहले कभी नहीं देखा था। दूर से जो इतना चटक दिखाई देता था पास आने पर वही बिलकुल निष्प्रभ जान पड़ी। दाहिने हाथ की अँगूठी का लाल झलमलाया।

सिगरेट का और भी लम्बा कश खींचकर महिला ने मेरी तरफ निगाह डाली। साहब का नाम लेकर पूछा कि क्या मैं उनके यहाँ काम करता हूँ? अजब मिठास था आवाज़ में। बहुत-सी महिलाओं को अंग्रेजी बोलते सुना है लेकिन आवाज़ का ऐसा स्वर-संगीत कानों में प्राय कहीं नहीं पड़ा।

जवाब दिया हाँ।

आप क्या बहुत बिज़ी हैं?

कहा, ना ना आपकी कोई मदद कर सकूँ तो ख़ुशी होगी।

सिगरेट राखदानी में फेंककर महिला ने एक बार सावधानी से चारों ओर ताका, फिर बहुत धीरे से कहा देखिए मुझ पर एक बड़ी आफत आ गई है। आपके साहब के साथ मुलाक़ात करना बहुत ज़रूरी है। उनसे कब मिल सकती हूँ?

उस दिन तो मुलाक़ात हर तरह नामुमकिन थी। एक और केस में साहब का व्यस्त रहना अनिवार्य था अत उन्हें दूसरे दिन शाम को साहब के कमरे में आने को कह दिया।

शार्टहैण्ड की कॉपी लेकर मैं साहब के पास बैठा हूँ। सामने की कुर्सी पर वही महिला हैं। गर्दन झुकाए फर्श की ओर ताक रही हैं। समझा शायद शर्म लिहाज छोड नहीं पा रही हैं। साहब के होंठों पर मुस्कराहट देखी। पहली मुलाकात मे किसी भी मुवक्किल का सकोच हट नहीं पाता। टेम्पल चेम्बर में यह दृश्य उनको अनेक बार देखना पडा है।

यथारीति परस्पर अभिवादन के बाद साहब ने कहा, "देखिए, डॉक्टर और वकील से राज छिपाना नहीं चाहिए। फिर मुझे दिखाकर कहा, 'ये मेरे स्टेनोग्राफर हैं। इनके सामने आप नि सकोच अपनी बात कह डालें।

'ना ना यह तो ठीक ही है। पहले कमरे में चतुर्दिक जल्दी में निगाह फेंकी फिर रुक रुककर टूटी फूटी अंग्रेज़ी में महिला ने जवाब दिया, "एक दम शुरू से ही कहना अच्छा होगा ?' वह फिर रुकी।

बिलकुल।"

"यह एक बडी लम्बी कहानी '

"पहले अपना नाम बता दें स्टेनोग्राफर लिख लेगा।'

"नाम पीछे बताऊँगी, पहले आपबीती कहती हूँ '

उस दिन नोटबुक के बहुत-से पन्ने भर गए। मन्त्रमुग्ध सा सुनता रहा मैं एक दुखदग्ध कलंकित जीवन का इतिहास।

बोलते-बोलते कभी उनका गला काँप उठा, कभी दोनों हाथों से मुँह दबा लिया और कभी लज्जित होकर भी अपना आवेग दबा न सकने के कारण वह फूट फूटकर रो पडीं।

भारत नहीं लेबनॉन के ईसाई परिवार में मेरियन स्टुअर्ट का जन्म हुआ। पिता की याद नहीं, बहुत छोटी सी थी तभी मर गए, माँ ही सब-कुछ थी। बच्चों को पालन-पोसन के लिए माँ को रोजगार की तलाश में निकलना पडा और जैसा प्राय होता है, वही जीविका मिली जो किसी भी समाज में किसी भी वक्त इज्जतदार नहीं मानी जाती। लेकिन लडकी को वह उसी रास्ते पर नहीं आने देना चाहती थी। लडकी भी उनकी देखने सुनने में खराब नहीं थी, इसी से उम्मीद थी कि अच्छा जमाई ज़रूर मिलेगा और वह निश्चिन्त

होकर जिएँगी।

मेरियन की माँ ने लड़की के लिए लड़का ढूँढ़ने का काम जितना सहज समझा था, असल में वह उतना सहज नहीं था। लड़की के साथ घूमने और उसे सिनेमा या काफे में ले जानेवाले लड़के या जवानों की कमी न थी किन्तु इसीलिए उनमें से कोई बाकायदा शादी का पैगाम भेजेगा ऐसा भरोसा न आदमी उस देश में नहीं जमा। इधर लड़की ने तेईस पार कर चौबीस में पैर बढ़ाए। स्वजाति का वर जुटने की उम्मीद छोड़कर मेरियन की माँ ने परदेशी दुल्हा ढूँढ़ना ही ठीक समझा।

अन्त में कप्टन हावर्ड नामक अंग्रेजी सेना के एक जवान को मेरियन की माँ ने जमाई बना ही लिया। शादी के बाद शायद एक साल पूरा नहीं बीता। इस शहर से उस शहर हवाई अफसर पति के साथ मेरियन घूमती फिरती रही। कप्टेन हावर्ड प्यार से कहता, मेरी फौज में नौकरी कर सारी दुनिया में घूमा हूँ किन्तु कोई भी औरत मेरी आँखों में रंग नहीं जमा सकी। जमाती भी कैसे ? मेरा भाग्य तो बंधा था वेबनान की एक शैतान लड़की के साथ।

बनावटी गुस्से से मेरियन मुँह बिचका देती। 'बहुत हुआ इस तरह अपना कीमत और न बढ़ाओ। तुम्हारे मुकाबले में कुछ भी नहीं हूँ, यह मैं जानती हूँ।' हावर्ड के कद्दावर हाथ को अपनी ओर खींचकर खलती रहती वह।

दिन आराम से कटते गए। पति-गर्व से गौरवान्वित औरतों के दिन क्या कभी खराब होते हैं ? हॉवर्ड के आराम के लिए मेरियन सदा चिन्तित रहती। पति का हर काम नौकरों पर न छोड़कर बहुत-सा काम-काज वह स्वयं करती।

हावर्ड कहता 'खुद ही क्या इतना खटती हो ? और एक नौकर रख लो।'

"बेकार खर्चा बढ़ाने से फायदा क्या ?'

दिसम्बर के बीचोबीच का दिन था। सूरज डूबने से कुछ ही पहले

लॉन में बैठकर वे दोनों चाय पी रहे थे। इसी समय कैप्टेन के नाम का एक तार आया। लिफाफा फाड़ा और तार पर एक नजर फेंकी और उसे मोड़ कर जेब में रख लिया हॉवर्ड ने।

हँसी का फव्वारा रुक गया। कैप्टेन गम्भीर हो गया था।

'क्या लिखा है? जरूर कोई बुरी खबर है?'

मेरियन ने जबर्दस्ती तार छीन लिया। विलायत तबादले का हुक्म था।

'यह तो अच्छी ही खबर है। मुझे तो इंग्लैंड बहुत अच्छा लगेगा तुम देख लेना।' खुशी से उछल पड़ी मेरियन।

लेकिन हॉवर्ड का चेहरा और भी काला पड़ गया। बिना जवाब दिए ही कैप्टन साहब कुर्सी छोड़कर अन्दर चले गए।

हॉवर्ड की परेशानी का सबब उस समय मेरियन को अज्ञात रहा लेकिन जाहिर होते देर न लगी। मेरियन को पासपोर्ट नहीं मिलेगा। कानून की निगाह में वह शादीशुदा औरत नहीं है। वास्तविक मिसेज हॉवर्ड पाँच बाल-बच्चों को लेकर नॉटिंघमशायर में घर गिरस्ती बसाए बैठी हैं।

चौंक पड़ी मेरियन। अचम्भे में आकर हॉवर्ड की ओर बहुत देर तक ताकती रह गई, पर उसने कुछ कहा नहीं।

मेल मुलाकातियों ने सुझाया 'झूठा! बदमाश! शैतान! इसे आसानी से छोड़ नहीं देना! अंग्रेजी कानून में एक औरत के मौजूद रहते दूसरी शादी करना जुर्म है। बैठी ने सोच क्या रखा है? इसे जेल भिजवाओ और साथ ही-साथ अदालत में हर्जाने का दावा कर दो।

लेकिन मेरियन राजी न हुई। जो भारी नुकसान हो गया, उसका मुआवजा कोई नहीं दे सकता। अदालती कारवाई से क्या होगा?

मेरियन के जीवन-नाटक में कैप्टन हॉवर्ड ने विदा ली। अब कैप्टन की पत्नी के रूप में उसका परिचय नहीं रहा, बहुत-से लोग पीठ-पीछे उसे फ्लो कैप्टेन की पुरानी रखैल भी कहते थे।

इधर पूजा-पूर्ति भी दुष्कर हो गई। लोगों का अन्दाज यही था कि काफी माल हथियाए बिना कैप्टन को छोड़ने वाली औरत नहीं है मेरियन। असल में उसने कुछ भी नहीं लिया था। हॉवर्ड का पैसा छूने में भी उसे घिन लगी थी।

एक साल तक मरियन किस तरह काम चलाती रही, हम नहीं बताया। साहब ने पूछा भी नहीं। किन्तु उसका अन्दाज लगाने के लिए ऊंची कल्पना शक्ति की जरूरत नहीं।

अन्तर्जातीय विवाह के बारे में जानकारी रखनेवाले एक हितैषी मित्र ने मेरियन को इंडिया जाने की सलाह दी। बोले, 'भाग्य मुंह न मोड़ ले तो वहाँ पर कुछ-न-कुछ जुटा सकना मुश्किल नहीं होगा।

उस वक्त भी भारतवर्ष का विसा पाना बिलकुल आसान न था, कम से-कम औरतों के लिए। विसा देने से पहले देखा जाता है कि किस तरह की औरत है, पति दरियादिल है या नहीं पति न रहे तो जीने रहने का बन्दोबस्त है या नहीं। जिस स्त्री का पति या जीने रहने का बन्दोबस्त नहीं भारतवर्ष में विसा अधिकारी उसे स्वागतम कहने को अधिक उत्सुक नहीं। उनकी इच्छा हो तो भी कलकत्ता बम्बई या दिल्ली की सिक्योरिटी पुलिस राजी नहीं होती। ऐसी औरतों पर नजर रखने में पुलिस के अफसर भी परेशान हो जाते हैं।

पासपोर्ट आफिस का पहाड़ लांघकर, विसा-आफिस का सागर पार कर मेरियन अन्त में किस तरह बम्बई आ पहुँची, यह न कहने से भी काम चलेगा। केवल इतना ही कहे देता हूं कि बम्बई में इस नये आगन्तुक का नाम मेरियन नहीं रहा, नया नाम था आभा स्टुअर्ट। बम्बई के विराट जन कानन में पहले तो वह किंकर्तव्य विमूढ़ हो उठी। नाजानकारी के इस अपार सागर में कूद पड़ने के बाद अनुभव हुआ कि देश त्याग गलत था। किन्तु तब भी लड़ाई खत्म नहीं हुई थी, अतः दो एक रात के मेहमानों के साथ मिस आभा स्टुअर्ट ऐसी व्यस्त हो उठी कि शादी कर घर बसाने की फिक्र करने का मौका ही नहीं मिला।

कुछ दिन बाद की बात है एक देशी पुरबिया राज्य के नवाब बम्बई में घूमने आए। राजा महाराजा कभी अकेले तो जाते नहीं। यार दोस्त, दीवान और नौकर-चाकर आदि परछाई की तरह उनका अनुसरण करते हैं।

ताज होटल की एक काक्टेल पार्टी में नवाब साहब के ए० डी० सी० के साथ आभा का परिचय हुआ। ए० डी० सी० बड़े मौजी जीव थे अतः

बातचीत जमते ज्यादा देर नहीं लगी। नोटबुक में नई बान्धवी का पता ठिकाना लिख गया।

आभा स्टुअर्ट के घर पर अब उनकी पद धूलि प्राय पड़ती। जवान ए० डी० सी० साहब ने लेबनान की सुंदरी के कदमों पर अपना दिल चढ़ा दिया। उम्र में आभा थोड़ी ही बड़ी थी किंतु उससे क्या आता-जाता है। कुछ रुकावटें पड़ती हैं, लेकिन और तरह की।

बड़ी कोशिश के बाद अपने नाखूनों की ओर नज़र डालते डालते कैप्टेन महीउद्दीन ने एक दिन कहा "आभा हम लोग तो मुसलमान हैं—बाप-दादों का मजहब है, इसके अलावा मुसलमानी राज में नौकरी भी है।'

'उससे क्या हुआ ? पहाड़ मुहम्मद के पास नहीं आया तो क्या मुहम्मद पहाड़ के पास नहीं जाएगा ? तुम मेरे सर्वाधिक स्नेहास्पद हो तुम्हारे लिए क्या मैं ईसाई से मुसलमान नहीं हो सकती ?' आभा के स्वर में भावावेश था।

बम्बई की एक मस्जिद में आभा स्टुअर्ट का नया नाम क्या रखा गया यह नोटबुक में नहीं लिखा। जेब उन्निसा था या मेहर उन्निसा यह भी ठीक याद नहीं आता।

नई दुलहिन के साथ ए० डी० सी० अपने नवाब की राजधानी लौट आए। ए० डी० सी० का बंगला क्या था, एक छोटा मोटा भली भाँति सुसज्जित महल कहिए। महीउद्दीन ने मुसकराकर कहा, "यह है आपकी मल्कियत बेगमी-साहबा, आज से यहाँ पर पूरी हुकूमत आपकी है।

नई बहू की लाजभरी हँसी से महीउद्दीन कृतकृत्य हो उठा। आभा को भी नया साज-सरजाम बहुत अच्छा लगा। अच्छा नहीं लगेगा ? यह तो उसकी अपनी दुनिया थी, न कि होटल में किराये का कमरा जिसमें कितने दिन रहेंगे, पता नहीं, इसलिए इच्छानुसार सजाने से फायदा क्या ?

घर में ज्यादा काम-काज नहीं था। सरकारी तनख्वाह पर अनेक नौकर थे। सेवा शुश्रूषा के लिए दो दासियाँ भी हाथ जोड़े तैनात थीं। खाने के बाद दोपहर के वक्त आभा महीउद्दीन का एलबम देखती। अनेक राजकीय उत्सवों में ए० डी० सी० के वेश में महीउद्दीन उससे पहले छात्र-जीवन

महीउद्दीन। स्वामी व अनजान और बीते जीवन के ये चित्र आभा को पुल कित कर देते। शाम को नहा धोकर वह साज सिंगार करने बठता। उसक बाद यत्नपूर्वक सजी-सवरी तवी आईने क सामने आ खडी होती। कभी अकस्मात महीउद्दीन आ जाता तो वह विस्मित हो जाती। वह मुसकराकर कहता, 'लेबनान म साडी नही पहनते फिर भी साडी पहनने पर कितनी सुदर लगती हो तुम!'

कभी-कभी वह बाहर के बरामद म बेंत की चेअर पर बैठी बठी महीउद्दीन के इन्तजार म क्षण गिनती रहती। पास की चेअर खाली रखती। नवाबी महल से महीउद्दीन को लौटने म प्राय दर हो जाती। सुदर आकाश— एकदम स्वच्छ मानो किसी शिल्पी न चित्राकन स पहले अपना कवम धो पोछकर निमल किया हो। उस निर्मेघ आकाश म क्रमश तारे उग आते मानो शिल्पी एक के बाद एक नई कूची लगाए जा रहा हो। नई दुलहिन क मानस पट पर भी चिन्ता के तारे उभरने लगते। एकाध नही बहुत-सी चिन्ताएँ। सजी-सवारी नही उलझी-सुलझी, अस्त व्यस्त। पक्तिबद्ध नाच करते हुए सत्य दल के समान नहा आती व साँझ होने पर घासला की ओर लौटता झुण्ड-की झुण्ड चिडिया की तरह आती हैं। दो दिन पहल जो दुनिया बकार और बरहम जान पडती थी आज उसकी दूसरी शक्ल थी। जिन्दगी म उसे तकलीफ हुई, यह ठीक है। लेकिन नई दुलहिन सोचती एक घर फूककर अल्लाह ने दूसरा घर तो बना ही दिया।

महीउद्दीन ने अपनी शादी की बात नवाब म नही कही थी। वास्तव म कहने की हिम्मत ही नही पडी। किन्तु खबर फलते तो ज्यादा दर नही लगती। नवाब ने ए० डी० सी० को बुलवाया।

'देखिए कप्टेन साहब शादी की तो खानदानी घर दखकर क्या नही की?' नवाब महीउद्दीन स कहने गए अमरीकिया की जूठी औरत क साथ शादी करत हुए आपको शम नहा आइ? जो हो गलती हर आदमी स होती है। खानदानी घर की खूबसूरत औरत के साथ आपकी शादी का बन्दोबस्त मैं खुद कर दूगा, इस डायन जासूस को आप फौरन रुखसत कर दें।'

महीउद्दीन ने नवाब साहब को समझाने की भरपूर कोशिश की, मरी

औरत जासूस नही है बहुत अच्छी औरत है, यकीन कीजिए।'

नवाब ने सजीदगी से कहा 'आपसे कहा नही गया ! अगले अडतालीस घटे मे इस औरत को स्टेट से बाहर निकालने के हुक्मनामे पर आज ही सुबह मैंने दस्तखत किए हैं। अगर चाहू तो आपका नाम भी उसी म दज करा दू।"

बेचारे कप्तन महीउद्दीन को गहरा सदमा लगा। लेकिन इस दुनिया मे सभी अष्टम एडवड या उनके भाव शिष्य चारुदत्त आधारकर ('दृष्टिपात के नायक) नहा हैं ! महीउद्दीन ने सोचा, एक औरत के जाने पर दूसरी औरत मिल सकती है किन्तु एक नौकरी छूटने पर दूसरी नौकरी इस जन्म म नही भी मिल सकती है।

घर लौटकर महीउद्दीन ने बेगम साहबा को बुलाकर कहा, "डार्लिंग आज तबीयत बहुत नाशाद है। आह ! कितने सपने देखे थे कि तुम्हारे साथ घर बसाकर रहूँगा लेकिन नवाब साहब ने सब मिटा दिए !"

महीउद्दीन ने नवाब साहब के साथ हुई मुलाकात की कैफियत दी। 'समझाने की बहुत कोशिश की पर कुछ नहीं हुआ।' घट-सा पीकर फिर बोले, "किन्तु काफी सोचा है, नौकरी छोडने से तो काम नही चलेगा।

थोडा ठहरकर लम्बी सास ली महीउद्दीन ने। डार्लिंग यही भी रहो मेरे दिल पर शुक्र तारे की तरह तुम ही सदा जगमगाती रहोगी।'

उस दिन रात को स्टेशन तक आने की हिम्मत नही पडी महीउद्दीन की। लेकिन नौकर द्वारा दो लिफाफे भेजे थे। एक म वकील की एक चिट्ठी थी

'महोदया, इसके द्वारा आपको आगाह करता हूँ कि मेरे मुवक्किल कप्तन महीउद्दीन खाँ ने दो नामी-गरामी गवाहों के सामने पाक इस्लामी कानून के मुताबिक तीन दफे 'तलाक' बोलकर आपको तलाक दे दिया है।

दूसरे लिफाफे मे दस-दस के पचास नोट थे। साथ मे एक टुकडा कागज। उस पर लिखा था 'राह-खर्च के लिए भेज रहा हूँ।'

इसके बाद केन्द्र हुआ कलकत्ता। लेबनान की एक औरत कलकत्ता मा पहुँची। फिर भी उसकी आँखों म घर बसाने के सपने ही बस थे।

कलात्ता की जिन्दगी का लम्बा चौडा बयान देने से फायदा क्या ? हाउस न लाउज से तो हम पहले से ही परिचित हैं।

इस समय शादी का एक पैगाम मिला है। पाणि प्रार्थी और कोई नहीं यह जंगली-जानवर छाप बुशर्ट पहननेवाला छोकरा है। छोकरे का परिचय अज्ञात था। सोचा था किसी मालदार व्यापारी का पथ भ्रष्ट लडका होगा। पता चला कि वह एक विख्यात देशी राज्य का राजकुमार है। मान लीजिए *कि, राज्य का नाम है चन्द्रगढ।*

युवराज मुझसे शादी करना चाहते हैं आभा रुकी। लाज भरी नजरें ऊँची कर फिर उसने कहा मैं भी युवराज को चाहती हूँ।

उसकी बात कुछ बेसुरी लगने पर भी उसके स्वर में अनन्य आत्म विश्वास तो था ही। जीवन के खेल में जो बार बार धोखा खाते और हार जाते हैं शायद भगवान उनको ही इतना मनोबल देते हैं।

इतनी देर तक एकटक सुन रहा था आभा स्टुअर्ट की कहानी यकीन नहीं आता था कि सच है। अच्छी तरह उसके चेहरे की ओर फिर देखा। *सताई हुई लडकी के चेहरे पर जो नम्र आभा रहती है वही उसके सारे चेहरे* पर बिखरी हुई थी। मानो वादना की आग से सूर्य कुछ क्षणों के लिए दगा दे रहे हों।

आगामी शनिवार के दिन एक मिशन मुझे हिन्दू धर्म की दीक्षा देगा। उसी दिन शाम को हम लोगों की शादी है।

आँखों से चश्मा उतारकर मेज पर रखते रखते साहब ने पूछा 'मेरे यहाँ आने की जरूरत क्या पडी, जब यह बताइए ?

इस शादी में युवराज के पिता की रजामन्दी नहीं है। हाँ वे तो यह *भी नहीं जानते कि आगामी शनिवार को हम लोगों की शादी है।* आजकल किसी पर पूरा यकीन नहीं होता। किन्तु यदि कुछ दिन बाद बाप के दबाव में युवराज इस शादी को नामंजूर कर दें तो अभी से उसके लिए क्या कर सकती हूँ ?—और एक बात। युवराज मुझे ईसाई ही समझते हैं। लेकिन अब मैं ईसाई हूँ या मुसलमान ? आभा स्टुअर्ट की आवाज फिर कुछ बेसुरी सी लगी।

कानूनदाँ के लिए यह कोई कठिन सवाल नहीं था। साहब बोले 'पहले तो शादी के बाद मिशन से सर्टिफिकेट लेना न भूलें। आगे चलकर शादी के सबूत में वही आपकी सबसे अधिक विश्वसनीय दलील होगी। दूसरे आपने जब हिंदू धर्म ग्रहण कर लिया तब क्रिश्चियन थीं या मुसलमान इससे कुछ नहीं आता जाता। अभी तो मेरी यही सलाह है। भविष्य में कोई नई घटना घटे तो मेरी मदद के बारे में आप निश्चिन्त रहें।'

आशा स्टुअर्ट के बाहर चले जाने के बाद भी साहब कुछ देर तक चुप बैठे रहे। अनुभव के कोष में जो नई वृद्धि हुई, उसी को शायद मन के किसी कोने में सम्हालकर रख रहे थे।

फिर कुछ हँसकर और मेरे कंधे पर एक चपत लगाकर बोले 'अचरज होता है तुम्हें, ठीक है न? कुछ ठहरकर फिर बोले तुम्हारी जिंदगी तो अभी शुरू हुई है। आँख और कान दोनों ही को खूब सजग रखो दुनिया में बहुत-सी अजीब चीज़ें देखोगे-सुनोगे।

मैं हाँ, ना कुछ नहीं बोला चुपचाप बैठा रहा।

"तुम्हारे परिवार में शादी से कुछ दिन पहले ही लड़की को केंद्रित कर अनेक नेग आदि होते हैं न? हमारे देश में भी माना कुछ सोचते सोचते साहब बोल रहे थे, 'लड़की तब सोचती है कि वह कितनी भाग्यवती है उसी को केंद्रित कर सारे नेग मनाए जा रहे हैं। किन्तु जिस लड़की को अपनी शादी का इंतज़ाम भी खुद ही करना पड़े और कानूनी सलाह करने हमारे पास दौड़ना भी पड़े वह बेचारी "

अगले रविवार को ज्यादा काम होने से मुझे हाउस में फिर जाना पड़ा। छुट्टी के दिन साहब का स्वभाव ही बदल जाता था। बैरिस्टर के काले गाउन के भीतर छिपा सदा प्रसन्न रसिक मन इतवार को मौका देखकर बाहर आ जाता। उस दिन काम से कहीं ज्यादा गप शप होती। अंग्रेज़ों के यहाँ काम और गपबाज़ी का रिश्ता जड़ और बहू का है। साहब मज़े में बता रहे थे, "अंग्रेज़ जहाँ ऑफिस खोलता है उसके इर्द गिर्द चार पाँच मील तक किसी क्लब की खुशबू तक नहीं होती। लेकिन इतवार को मैं पूरा फ्रांसीसी हो जाता हूँ। उनके यहाँ तो आफिस में ही आधा पर्दा टाँगकर गप शप करने का प्रबंध रहता है।'

गाम को चाय के टेबल पर साहब बात कर र थ मैं सुन रहा था। इसी समय बेअरा ने हाथ म स्लिप देकर जताया कि रानी मीरा अग्निय नारायण साहब से मिलना चाहती हैं।

ऐसा अदभुत नाम कभी नहीं सुना था। साहब इस देश के निवासी न होन पर भी भारतीय नामों के गूढार्थों स परिचित थ। कौन स मुकुन्द कुलीन हैं ? उत्तर और दक्षिण राढी म फर्क क्या है ? गायल उपाधि की उपज सिन्ध म हुई थी या राजपूताना म ? इत्यादि सवाल उठने पर व एक दर्जन भट्टाचार्यों को भी हरा सकते थ। किन्तु व भी इस नाम से कुछ न समझ सके।

सारी उत्सुकता मिटाकर जो महिला अन्दर आई वह और कोई नहीं हमारी वही युवराज प्रिया ही थीं। गेरुआ रंग की सिल्की साडी से उनका शरीर परिवेष्टित था। मांग म लाल लाल सिन्दूर। एम स्निग्ध और सौम्य रूप म तो आभा स्टुअर्ट को किसी दिन नहीं देखा था।

मीरा नाम आपको कैसा लगता है ? कुर्सी पर बैठते ही वह पूछने लगी।

'खूब अच्छा है साहब न सिर हिलाकर उत्तर दिया।

बहुत सोचकर यह नाम पसन्द किया है और अग्नियनारायण मेर पति की वंशगत उपाधि है।

'मोस्ट इन्टरेस्टिंग साहब ने बेअरा को और एक कप चाय का इशारा करने के बाद पूछा, 'कोई नई खबर है क्या रानी साहबा ?

रानी निरुत्तर रहीं। धीरे धीरे उनके चेहरे की कान्ति विलीन होने लगी। अकस्मात रानी बहुत थकी-सी जान पडीं। चाय का प्याला दूर हटा कर आहिस्ते बोली, 'बहुत चिन्तित हूं। आपसे कहा था न मेरे श्वसुर इस शादी से राजी नहीं हैं। अब वे मुझे इण्डिया से बाहर निकालने की चेष्टा कर रहे हैं। यहाँ की सिक्यूरिटी पुलिस को व

गम्भीरता से साहब ने जवाब दिया, हाँ तब तो चिन्तनीय बात है। सिक्यूरिटी पुलिस चाहे तो किसी भी विदेशी को यहाँ से बाहर निकाल सकती है।

अब क्या होगा ? आप ही इस परदेश म मेरे एकमात्र हमदर्द हैं।